इकाई 5 : देवदारु (आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी)

इकाई की रुपरेखा

5.0 उद्देश्य

5.1 प्रस्तावना

5.2 निबंध का वाचन : देवदारु

5.3 निबंध का सार

5.4 सन्दर्भ सहित व्याख्या

5.5 अंतर्वस्तु

- 5.5.1 विचार पक्ष
- 5.5.2 भाव पक्ष

5.6 लेखकीय अभिव्यक्ति

5.7 संरचना शिल्प

- 5.7.1 भाषा
- 5.7.2 शैली

5.8 मूल्यांकन

- 5.8.1 निबंध का प्रतिपाद्य
- 5.8.2 शीर्षक

5.9 सारांश

5.10 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

5.0 उद्देश्य

इस इकाई के अंतर्गत हम 'देवदारु' नामक निबंध का अध्ययन करेंगे। 'देवदारु' निबंध के रचनाकार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी है। इस इकाई के अंतर्गत हम हिंदी निबंध में उनके योगदान का भी अध्ययन करेंगे। साथ ही लेखक परिचय, निबंध का सार और प्रमुख अंशों का सन्दर्भ सहित व्याख्या भी की जाएगीं। इस इकाई को पढ़ने के बाद आप निम्नलिखित बिन्दुओ को समझ पाएंगे :

- निबंध की विषयवस्तु और सार अपने शब्दों में लिख सकेंगे;
- कठिन शब्दों के अर्थ आसानी से निकाल सकेंगे;
- निबंध में आए महत्वपूर्ण अंशों का व्याख्या कर सकेंगे;
- निबंध के संरचना शिल्प को समझा जा सकता है;
- लेखकीय अभिव्यक्ति के साथ निबंध की अंतर्वस्तु का भी अध्ययन कर सकते है;
- निबंध को पढने के बाद पाठक मजदूरी, मजदूर और किसान के प्रति अपनी समझ विकसित कर सकता है।

5.1 प्रस्तावना

हिंदी में निबंध लेखन की परम्परा बहुत लम्बी है। भारतेंदु काल से शुरू होकर आज भी इसकी लेखन परम्परा जारी है। हजारी प्रसाद द्विवेदी और उनका रचना संसार बहुत

BHDC-112_Hindi.indd 100 4/27/2022 3:29:21 PM

बड़ा है। इनका साहित्य पुरानी और नई सामाजिक सांस्कृतिक सामंजस्य का प्रतीक है। इतिहास लेखन से लेकर आलोचना तक इनकी पैठ है। निबंधों की परम्परा में इनका लेखन एक ललित निबंधकार के रूप में जाना जाता है। इनके निबंधो में विषय के साथ शैली भी परिवर्तित हो जाती है। आचार्य शुक्ल की तरह इनके निबंध भी तत्सम प्रधान हैं, लेकिन इनके निबंधों में ग्रामीण व देशज शब्द शुक्ल जी से अलग कर देती है। आचार्य द्विवेदी के सन्दर्भ में यह बात उचित है कि 'भारतीय संस्कृति, इतिहास, साहित्य, ज्योतिष और विभिन्न धर्मों का उन्होंने गम्भीर अध्ययन किया है जिसकी झलक इनके निबंधों में मिलती है। छोटी–छोटी चीजों, विषयों का सूक्ष्मतापूर्वक अवलोकन और विश्लेषण–विवेचन उनकी निबंधकला का विशिष्ट व मौलिक गुण है। उनके निबंध दार्शनिक तत्व प्रधान एवं सामाजिक जीवन से संबंध रखते हैं। द्विवेदी जी के इन निबंधों में विचारों की गहनता, निरीक्षण की नवीनता और विश्लेषण की सूक्ष्मता रहती है। आचार्य द्विवेदी ने साहित्य की प्रासंगिता के सन्दर्भ में स्वयं कहते हैं कि – 'मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है जिस कृति से यह उद्देश्य सिद्ध नहीं होता, वह वाग्जाल है।'

जीवन और जगत के संबंध में द्विवेदी जी लोक को वरीयता देते है, ऐसे में उनकी चिंतन को लोकधर्मी चिंतन कहा जा सकता है। द्विवेदी जी ने आचार्य शुक्ल की शास्त्रीय लोकमंगल की अवधारणा और विचारधारा को ख़ारिज करते हुए जन पर आधारित लोक को प्राथमिकता दी। यही कारण है की शुक्ल जी के यहाँ तुलसीदास केंद्र में है और द्विवेदी जी के यहाँ कबीर।

अतः द्विवेदी जी के निबंधो के अध्ययन से पाठक लोक और शास्त्र के साथ सांस्कृतिक चेतना को भी समझ सकते हैं, द्विवेदी जी के सारे निबंध चिंतन के केंद्र में मनुष्य ही है ।

5.2 निबंध का वाचन : देवदारु

पता नहीं किसने इस पेड़ का नाम देवदारु रख दिया था, नाम निश्चय ही पुराना है, कालिदास से भी पुराना, महाभारत से भी पुराना। सीधे ऊपर की ओर उठता है, इतना ऊपर कि पासवाली चोटी के भी ऊपर उठ जाता है, एकदम द्युलोक को भेद करने की लालसा से। नीचे शाखाएँ मर्त्यलोक को अभय–दान देने की मुद्रा में फैलती चली जाती हैं, मानों कह रही हों, भय नहीं, मैं जो हूँ। प्रत्येक शाखा को झबरीली टहनियाँ कँटीले पत्तों के ऐसे लहरदार छंदों का वितान तानती हैं कि छाया चेरी–सी अनुगमन करती हैं। जिस आचार्य ने पतिपाटीविहित निष्टजनानुमोदित 'सज्जा' को 'छाया' नाम दिया था वह जरूर इस पेड़ की शोभा से प्रभावित हुआ था। पेड़ क्या है, किसी सुलझे हुए कवि के चित्तका मूर्तिमान छंद है – धरती के आकर्षण को अभिभूत करके लहरदार वितानों की शृंखला को सावधानी से सँभालता हुआ, विपुल–व्योम की ओर एकाग्रीभूत मनोहर छंद। कैसी शान है, गुरुत्वाकर्षण के जड़–वेग को अभिभूत करने की कैसी स्पर्धा है – प्राण के आवेग की कैसी उल्लासकार अभिव्यक्ति है! देवताओं का दुलारा पेड़ नहीं तो क्या है।क्या यों ही समाधि लगाने के लिए महादेव ने 'देवारुद्रुम–वेदिका' को ही पसंद किया था? कुछ बात होनी चाहिए। कोई नहीं बता सकता कि महादेव समाधि लगाकर क्या पाना चाहते थे। उन्हें कमी किस बात की थी? कालिदास ने बताया है कि उन्होंने इस प्रयोजनातीत (निष्प्रयोजन तो कैसे कहें) समाधि के लिए देवदारु–द्रुम के नीचे वेदिका बनायी थी। शायद इसलिए कि देवदारु भी अर्थातीत छंद है – प्राणों का उल्लासनर्तन, जड़शक्ति के द्वारा आकर्षण को पराभूत करके विपुल–व्योम–मंडल में विहार करने का अर्थातीत आनंद!

कहते हैं, शिव ने जब उल्लासतिरेक में उद्याम–नर्तन किया था तो उनके शिष्य तंडु मुनि ने उसे याद कर लिया था। उन्होंने जिस नृत्य का प्रवर्तन किया उसे 'तांडव' कहा जाता है। 'तांडव' अर्थात् 'तंडु' मुनि द्वारा प्रवर्तित 'रस भाव–विवर्जित' नृत्य! रस

BHDC-112_Hindi.indd 101 4/27/2022 3:29:21 PM

भी अर्थ है, भाव भी अर्थ है, परंतु तांडव ऐसा नाच है, जिसमें रस भी नहीं। भाव भी नहीं, नाचने वाले का कोई उद्देश्य नही, मतलब नहीं, 'अर्थ' नहीं। केवल जड़ता के द्व ारा आकर्षण को छिन्न करके एकमात्र चौतन्य की अनुभूति का उल्लास! यह 'एकमात्र' लक्ष्य ही उसमें छंद भरता है, इसी से उसमें ताल पर नियंत्रण बना रहता है। एकाग्रीभाव छंद की आत्मा है। अगर यह न होता तो शिव का तांडव बेमेल धमाचौकड़ी और लस्टम–पस्टम उछल–कूद के सिवा और कुछ न होता। तांडव की महिमा आनंदोमुखी एकाग्रता में है। समाधि भी एकाग्रता चाहती है। ध्यान–धारणा, और समाधि की एकाग्रता से ही 'योग' सिद्ध होता है। बाह्य–प्रकृति के द्वारा आकर्षण को छिन्न करने का उल्लास तांडव है। अंतःप्रकृति के असंयत फिंकाव को नियंत्रित करने के उल्लास का नाम ही समाधि है। देवदारु वृक्ष पहले प्रकार के उल्लास को सूचित करता है, शिव का निर्वात 'निष्कम्पड़वप्रदीपरू' रूप दूसरे प्रकार के। दोनों में एक ही छंद है। शिव ने समझ–बूझकर ही देवदारुद्रुम की वेदिका को पसंद किया होगा। देवदारु के नीचे समाधिस्थ महादेव! तुक मिल रहा है, शानदार तुक! कौन कहता है कि कालिदास ने तुक मिलाने की परवाह नहीं की। मेरा मन कहता है कि कालिदास भी तुकाराम थे, तुक मिलाने के मौजी वागविलासी! मगर ये तुक भोड़े किस्म के नहीं थे, यह तो निश्चित है। 'झगरे–रगरे बगरे–डगरे' ये भी कोई तुक है। मगर सारी दुनिया इसी तुक को तुक कहती आ रही है। कुछ–न–कुछ तो होगा ही। सारी दुनिया पागल नहीं हो सकती है। लेकिन यह भी सही है कि 'बात–बात' में तुक मिला करता है। अगर ऐसा ना होता तो 'बेतुकी' हाँकने वालों को बुरा न माना जाता जो लोग 'तुक की बात करते हैं' वे शब्द की ध्वनियों का तुक तो नहीं मिलाते। फिर तुक है क्या?

बोध प्रश्न

1. 'देवदारु' निबंध के लेखक का क्या नाम है?
   क) आचार्य रामचंद्र शुक्ल ख) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी
   ग) दिनकर घ) कोई नहीं
2. लोक विश्वास में तांडव कौन देवता करते हैं?
   क) राम ख) कृष्ण
   ग) देवी मैया घ) शिव
3. लेखक के अनुसार जीवन में क्या जरुरी है?
   क) तुक, लय, छंद और अर्थ ख) फकीरी
   ग) पाखंड घ) पूजा–पाठ
4. यह निबंध किस पेड़ पर आधारित है?
   क) महुआ ख) आम
   ग) देवदारु घ) इमली

तुक वह है जो देवदारु की गगनचुंबी शिखा और समाधिस्थ महादेव की निवात–निष्कंप प्रदीप की ऊर्ध्वगामिनी ज्योति में है! अर्थात् तुक अर्थ में रहता है ध्वनि–साम्य के तुक में कुछ न कुछ अर्थचारुता होनी चाहिए। ध्वनिसाम्य साधन है, तुक अर्थ का धर्म होना चाहिए। मगर कहना खतरे से खाली नहीं है। किसी नये आलोचक ने अर्थ को लय की वकालत की है। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि सारी पंडित–मंडली उस गरीब पर बरस पड़ी है। अगर तुक अर्थ में मिल सकता है तो लय क्यों नहीं मिल सकता। मेरे अंतर्यामी कहते हैं कि तुक तो अर्थ में नहीं रहता है लय नहीं रहता। बहुत से लोग अंतर की आवाज को आँख मूँदकर मान लेते हैं। मैं नहीं मान पाता। आँखें खोलने पर भी यदि

BHDC-112_Hindi.indd 102 4/27/2022 3:29:21 PM

अंतर की आवाज ठीक जँचे तो मान लेना चाहिए, क्योंकि उस अवस्था में भीतर और बाहर का तुक मिल जाता है। शिवजी ने अंतर और बाहर का तुक मिलाने के लिए ही तो देवदारु को चुना था। अंतर्यामी भी बहिर्यामी के साथ ताल मिलाते रहें यही उचित है। महादेव ने आँखें मूँद ली थीं, देवदारु ने खोल रखी थी। महादेव ने भी जब आँख खोल दी तो तुक बिगड़ गया, छंदोभंग हो गया, त्रैलोक्य को मदविह्वल करने वाला देवता भस्म हो गया। उसका फूलों की तूणीर जल गया, रत्नजटित धनुष टूट गया। सब गड़बड़ हो गया। सोचता हूँ, उस समय देवदारु की क्या हालत हुई होगी। क्या इतनी ही फक्कड़ाना मस्ती से झूम रहा होगा? क्या ऐसा ही बेलौस खड़ा होगा? शायद हाँ, क्योंकि शिव की समाधि टूटी थी, देवदारु का तांडव–रस–भावविवर्जित महानृत्य – नहीं टूटा था। देवता की तुलना में भी निर्विकार रहा – काठ बना हुआ। कौन जाने इसी कहानी को सुनकर किसी ने इसे 'देवता का काठ' (देव–दारु) नाम दे दिया हो। फक्कड़ हो तो अपने लिए हो बाबा, मनुष्य के लिए तो निरकाठ हो, दया नहीं, माया नहीं, आसाक्ति नहीं, निरे काठ! ऐसों से तो देवता ही भला! कहीं न कहीं उसमें दिल तो है। मगर यह भी कैसे कहा जाए! देवता के दिल होता तो लाज–शरम भी होती, लाज–शरम होती तो आँखों की पलकें भी झँपती। लेकिन देवता है कि ताकता रहता है, पलक उसकी झँपती ही नहीं! एक क्षण के लिए उसने आँखें मूँदी कि अनर्थ हुआ! बहुत सावधान, सदा जाग्रत।

अलबत्ता, महादेव इन देवताओं से भिन्न थे। जहाँ आँखें झुकनी चाहिए, वहाँ उनकी आँखें झुकती थीं, जहाँ टकटकी बँधनी चाहिए वहाँ बँध जाती थी। पार्वती जब वसनापुष्पोंके आभरण से सजी हुई संचारिणी पल्लविनी लता की भाँति उनके सामने आयीं, तो उनके (पार्वती) बिंबफल के समान अधरोष्ठ वाले मोहक मुख पर उनकी टकटकी बँध गई। फिर उनकी आँखें झुकीं भी। वे मनुष्य के समान विकारग्रस्त हुए। वे देवताओं में मनुष्य थे –महादेव! उस दिन देवदारु चूक गया। वह सब देखता रहा। इतना बड़ा अनर्थ हो गया औरआपने अवधूतपन का बाना नहीं छोड़ा। वह महावृक्ष नहीं बन सका 'देवरदारू' बन गया। आँखें खोले रहना भी कोई तुक की बात है! महावृक्ष वनस्पति होते हैं, जिनमें भावुकतातो नहीं पर सार्थकता होती है, जो फूल तो नहीं देते पर फल देते हैं – 'अपुष्पा फलवंतो येः'। देवदारु चूक गया, 'वनस्पति' की मर्यादा से वंचित रह गया।

तो क्या हुआ? यह सब मनुष्य की आत्म–केंद्रित दृष्टि का प्रसाद है। देवदारु को इससे क्या लेना–देना! वह तो जैसा है ऐसा बना हुआ है। तुम उसे वनस्पति कहो या देवता का काठ कहो। तुम्हें अच्छा लगता है तो अच्छा नाम देते हो, बुरा लगता है तो बुरा नाम देते हो। नाम में क्या धरा है। मुमकिन है, इसका पुराना नाम देवतरु हो। देवताका तरु नहीं, देवता भी और तरु भी। देव होकर वह छंद है, तरु होकर अर्थ है। छंद, समष्टिव्यापिनी जीवन–गति के समानांतर चलने वाले व्यष्टिगत–प्राणवेग का नाम है, अर्थ, समाज स्वीकृत–प्राप्त संकेत हुआ करता है।

जहाँ बैठकर लिख रहा हूँ वहाँ ऊपर और नीचे पर्वत पृष्ठ पर देवदारु वृक्षों की सोपान–परंपरा–सी दीख रही है। कैसी मोहक शोभा है। वृक्ष और भी हैं, लोगों ने नाम भीबताए हैं, पर सब छिप गये हैं। दिखते हैं, आकाश–चुंबी देवदारु ऐसा लगता है कि ऊपर वाले देवदारु वृक्षों की फुनगी पर से लुढ़का दिया जाऊँ तो फुनगियों पर ही लोटता हुआ हजारों फीट नीचे तक जा सकता हूँ अनायास! पर ऐसा लगता ही भर हैं। भगवान करे कोई सचमुच लुढ़का दे। हड्डी पसली चूर हो जाएगी। जो कुछ लगता है वह सचमुच हो जाए तोअनर्थ हो जाए। लगने में बहुत–सी बातें लगती हैं। इसलिए कहता हूँ कि लगना अर्थ नहीं होता, कई बार अनर्थ होता है। अर्थ वास्तविकता है, वास्तविक जगत् की सचाई है, लगता है सो मन का विकल्प है, अंतर्जगत् की स्पृहा मात्र

BHDC-112_Hindi.indd 103 4/27/2022 3:29:21 PM

है, छंद है। दोनों में कहीं ताल–तुक मिल जाता तो काम की बात होती। नहीं मिलता, यह खेद की बाद है। ताल–तुक मिलना अर्थ है, न मिलना अनर्थ है।

प्रत्येक व्यक्ति के मन में कुछ न कुछ लगता ही रहता है। मजेदार बात यह है कि व्यक्ति का लगना अलग–अलग होता है। 'अ–लग' अर्थात् जो न लगे। लगता है पर नहीं लगता, यह भी कोई तुक की बात हुई? तुक की बात तब होती जब लगना 'अलग' लगना न होता। इसीलिए कहता हूँ कि तुक अर्थ में होता है। जिसने इस पेड़ का नाम देवदारु दिया था उसे क्या लगा था, कह नहीं सकता। बात औरों को भी कमोबेग लगी होगी, तभी सबने मान लिया। जो सबको लगे सो अर्थ, एक को लगे, बाकी को न लगे तो अनर्थ! अलगाव को ही पुराने आचारों ने पृथकत्व–बुद्धि का नाम दिया है। और भी समझा कर कहा है कि यह अलगाव 'मैं पन' है, 'अहंकार' है। इधर कवि लोग हैं उन्हें कि हमेशा कुछ देखकर कुछ न कुछ लगता ही रहता है। खुले–आम कहते हैं कि मुझे ऐसा लग रहा है। दुनिया की ओर भी देखो। वह तुम्हें पागल कहेगा। पागल को भी तो कुछ–न–कुछ लगता रहता है। मगर दुनिया को देखता हूँ तो हैरत में पड़ जाता हूँ। कवि को जो कुछ लगता है उसका वाह–वाह करके उसे सिर उठा लेती है। कुछ समझ में नहीं आता। 'हाँ ही बौरी बिरह बस के बौरौ सबगाँव'।

बिहारी अच्छे खासे कवि माने जाते हैं। उन्हीं की बात याद आ गई थी। बात इतनी ही सी थी कि कोई विरह की मारी स्त्री कह रही है कि मैं ही पागल हो गयी हूँ या सारा गाँव ही पागल हो गया है? क्या समझ कर ये लोग चाँद को ठंडी किरनवाला कहते हैं – 'कहाँ जाने ये कहत है ससिहिं सीत–कर नाँव' विरह की मारी महिला का दिमाग बिगड़ गया है, जो सबको ठंडा लग रहा है, उसे वह दाहक मान रही है। पागलपन ही तो है। मगर जब बिहारी ने उसे दोहा छंद में बाँध दिया हो बात बिल्कुल बदल गयी। हाय–हाय, कैसी विरह–वेदना है कि उस सुकुमार बालिका को चाँद भी गरम मालूम पड़ता है। हृदय के भीतर जलनेवाली विरहाग्नि ने उसे किसी काम का नहीं छोड़ा। हे भगवान, तुम ऐसा कुछ नहीं कर सकते कि सारे गाँव के समान इस बालिका को भी चंद्रमा उतना ही शीतल लगे जितना औरों को लगता है! अर्थात् विरहिणी की दारूण–व्यथा अब सब के चित्त की सामान्य अनुभूति के साथ ताल मिलाकर चलने लगी। पागल का 'लगना' एक का लगना होता है, कवि का लगना सबको लगने लगता है। बात उलट कर कही जाय तो इस प्रकार होगी – जिसका लगना सबको लगे वह कवि है, जिसका लगना सिर्फ उसे ही लगे, औरों को नहीं, वह पागल। लगने–लगने में भी भेद है। जो सबको लगे, वह अर्थ है, जो एक को ही लगे, वह अनर्थ है।अर्थ सामाजिक होता है।

मगर देवदारु नाम केवल नाम ही नहीं है। मैंने अपने गाँव के एक महान भूत–भगवान ओझा को देवदारु की लकड़ी से भूत भगाते देखा है। आजकल के शिक्षित लोग भूत में विश्वास नहीं करते। वे भूत को मन का वहम मानते हैं। पर गाँव में भूत लगते मैंने देखा है। भूत भागते भी देखा है। भूत भी लगता है। सब लगालगी वहम ही होती होगी। आँखों को भी। बिहारी जानते थे। कह गये हैं – 'लगालगी लोचन करें, नाहक मन बँध जाय।' नाहक अर्थात् बेमतलब, निरर्थक।

हमारे गाँव में एक पंडितजी थे। अपने को महाविद्वान् मानते थे। विद्या उनके मुँह से फचाफच निकला करती थी। शास्त्रार्थ में वे बड़े–बड़े दिग्गजों को हरा देते थे।विद्या के जोर से नहीं, फचफचाहट के आघात से। प्रतिपक्षी मुँह पोछता हुआ भागता था। अगर कुछ कैड़े का हुआ तो दैहिक–बल से जय–पराजय का निश्चय होता था। मेरे सामने ही एक बार खासी गुत्थमगुत्थी हो गई। गाँव–जवार के लोगों को पंडितजी की विद्या पर भरोसा नहीं था पर उनकी फचाफच वाणी और – भीमकाया पर विश्वास अवश्य था।शास्त्रार्थ में पंडितजी कभी हारे नहीं। कम लोग जानते हैं कि शास्त्रार्थ

BHDC-112_Hindi.indd 104 4/27/2022 3:29:21 PM

में कोई हारता नहीं, हराया जाता है! पंडितजी के यजमान जम के उनके पीछे लाठी लेकर खड़े हो जाते थे तो उनकी विजय निश्चित हो जाती थी। पंडितजी केवल बड़े दिग्गज विद्वानों को ही नहीं, आसपास के भूतों को भी पराजित करने में अपना प्रतिद्वंद्वी नहीं मानते थे। गायत्री का मंत्र जो उनके मुँह से आल्हा जैसा सुनाई देता था और देवदारु की लकड़ी उनके अस्त्र थे। एक बार वे बगीचे से गुजर रहे थे, घोर अंधकार, भयंकर सुनसान!क्या देखते हैं कि आगे दनादन ढेले गिर रहे हैं। पंडितजी का अनुभवी मन तुरंत ताड़ गया कि कुछ दाल में काला है। मनुष्य इतनी तेजी से ढेले नहीं फेंक सकता। पंडितजी डरने वाले नहीं थे, पीछे मुड़कर ललकारा – अरे केवन है। केवन अर्थात् कौन। पीछे मुड़कट्टा, घोड़े पर चढ़ा चला आ रहा था, टप्प–टप्प–टप्प! (यहाँ पाठकों की जानकारी के लिए बता दूँ कि एक बार मैंने अपने गाँव में भूतों के जाति–भेद की जाँच की थी। कुल तेईस किस्म के हैं। मुड़कट्टा एक भूत ही है। मूँड़ नहीं है। छाती पर दो आँखें मशाल की तरह जलती रहती हैं। घोड़े पर चढ़कर चलता है) सो, पंडितजी से उलझने की हिमाकत की इस मुड़कट्टे ने। डरनेवाला कोई और होता है। पंडितजी ने जूता उतार दिया, वह गायत्री मंत्र के पाठ में बाधक था। झमाझम गायत्री पढ़ने लगे। देवदारु की लकड़ी मुट्ठी में थी। दे रद्दे पर रद्दा। विचारा मुड़कट्टा त्राहि–त्राहि कर उठा। अबकी बार छोड़ दो पंडितजी, पहचान नहीं सका था। अब फिर यह गलती नहीं होगी। आज मैं तुम्हारा गुलाम हुआ। पंडितजी का ब्राह्मण मन पसीज गया। नहीं तो यह सारे गाँव–जवार का कंटक समाप्त हो गया होता। मैंने यह कहानी स्वयं पंडितजी के मुँह से सुनी थी। अविश्वास करने का कोई उपाय नहीं था – फर्स्टहैंड इन्फर्मेशन था। उस दिन मेरे बालचित्त पर देवदारु की धाक जम गयी थी! अब भी क्या दूर हुई है।

आज देवदारु के जंगल में बैठा हूँ। लाख–लाख मुड़कट्टों को गुलाम बना सकता हूँ। भूतों में जैसे मुड़कट्टे होते हैं, आदमियों में भी कुछ होते हैं। मस्तक नाम की चीज उनके पास होती नहीं, मस्तक ही नहीं तो मस्तिष्क कहाँ, लता ही कट गई तो फूल की संभावना ही कहाँ रही – 'लतायां पूर्वलूनायां प्रसूनस्योद्भवरू कृतरू।' क्या इन मुड़कट्टों को देवदारु की लकड़ी से पराभूत किया जा सकता है? करने का प्रयत्न ही कर रहा हूँ। पंडितजी के पास तो फचफची गायत्री थी, वह कहाँ पाऊँ?

मन की सारी भ्रांति को दूर करनेवाले देवदारु तुम्हें देखकर मन श्रद्धा से जो भर जाता है, वह अकारण नहीं है। तुम भूत भगवान हो, तुम वहम–मिटावन हो, तुम भ्रांति नसावन हो। तुम्हें दीर्घकाल से जानता था पर पहचानता नहीं था, अब पहचान भी रहा हूँ। तुम देवता के दुलारे हो महादेव के प्यारे हो, तुम धन्य हो।

जानता हूँ कि बुद्धिमान लोग कहेंगे कि यह महज गप्प है। यह भी जानता हूँ कि कदाचित् अंतिम विश्लेषण पर पंडितजी की कहानी 'पत्ता खड़का, बंदा भड़का' से अधिक वजनदारन साबित हो। संभावना तो यही तक है कि पत्ता भी न खड़का हो और पंडितजी ने आद्योपांत पूरी कहानी बना ली हो। मगर बलिहारी है इस सर्जन शक्ति की। क्या शानदार कहानी रची है पंडितजी ने! आदिकाल से मनुष्य गप्प रचता आ रहा है, अब भी रचे जा रहा है। आजकल हम लोग ऐतिहासिक युग में जीने का दावा करते हैं। पुराना मनुष्य 'मिथकीय युग में रहता था, जहाँ वह भाषा के माध्यम को अपूर्ण समझता था, वहाँ मिथकीय तत्वों से काम लेता था। मिथक गप्पें – भाषा की अपूर्णता को भरने का प्रयास है। आज भी क्या हम मिथकीय तत्वों से प्रभावित नहीं हैं? भाषा बुरी तरह अर्थ से बँधी हुई है। उसमें स्वच्छंद संचार की शक्ति क्षीण से क्षीणतर होती जा रही है। मिथक स्वच्छंद विचरण करता है। आश्चर्य होता है भाषा का मिथक अभिव्यक्त करता है भाषातीत को। मिथकीय आवरणों को हटाकर उसे तथ्यानुयायी अर्थ देने वाले लोग मनोवैज्ञानिक कहलाते हैं, आवरणों की सार्वभौम रचनात्मकता को पहचानने वाले कला समीक्षक कहलाते हैं। दोनों को भाषा का सहारा लेना पड़ता है, दोनों धोखा खाते हैं।

BHDC-112_Hindi.indd 105 4/27/2022 3:29:21 PM

भूत तो सरसों में है। जो सत्य है, वह सर्जनाशक्ति के हिरण्य–पात्र में मुँह बंद किए ढँका ही रह जाता है। एक पर एक गप्पों की परतें जमती जा रही हैं। सारी चमक सीपी को चमक में चाँदनी देखने की तरह मन का अभ्यास मात्र है। गप्प कहाँ नहीं हैं, क्या नहीं है? मगर छोड़िए भी।

देवदारु भी सब एक से नहीं होते। मेरे बिलकुल पास में जो है, वह जरठ भी है, खूसट भी। जरा उसके नीचे की ओर जो है, वह सनकी–सा लगता है। एक मोटे राम खड्ड के एक प्रांत पर उगे हैं, आधे जमीन में, आधे अधर में, आधा हिस्सा ठूँठ, आधा जगर–मगर, सारे कुनबे के पाधा जान पड़ते हैं। एक अल्हड़ किशोर है, सदा हँसता–सा, कवि जैसा लगता है। जी करता है इसे प्यार किया जाए। सदा से ऐसा होता आया है। हर देवदारु का अपना व्यक्तित्व होता है। एक इतना कमनीय था कि बैल की ध्वजा वाले महादेव ने उसे अपना बेटा बना लिया था। पार्वती माता की छाती से दूध ढरक पड़ा था। कालिदास खुद कह गये हैं। मगर कुछ लोग ऐसे होते हैं कि उन्हें 'सबै धान बाईस पसेरी' दिखते हैं।वे लोग सबको एक ही जैसा देखते हैं। उनके लिए वह खूसट, वह पाधा, वह सूम, वह सनकी, वह झबरैला, वह चपरगेंगा, वह गदरौना, वह खिटखिटा, वह झक्की, वह झुमरैला, वह धोकरा, वह नटखटा, वह चुनमुन, वह बाँकुरा, वह चौरंगी सब समान हैं। महादेवजी के प्यारे बेटे के कमनीय व्यक्तित्व को भी सब नहीं पहचान सकते थे। एक मदमत्त गजराज आये और अपने गंडस्थल की खाज मिटाने के लिए उसी पर पिल पड़े। जड़ें हिल गईं, पत्ते झड़ गये, खाल छूट गयी और आप खाज मिटाते रहे। महादेव जी को बड़ा क्रोध आया। आना ही था। उन्होंने उसकी रक्षा के लिए एक सिंह तैनात कर दिया। पर मेरे सामने जो अल्हड़ कवि है, इसका क्या होगा? वह तो कहिए कि इधर हाथी आते ही नहीं। फिर भी डर तो लगता ही है। हाथी न सही गधों और खच्चरों से तो शहर भरा पड़ा है। लेकिन मैं जिधर हूँ उधर वे भी कम ही आते हैं। गाहे–बगाहे आ भी जाते हैं पर उन्हें देवदारु की तरफ देखने की फुरसत नहीं होती। उन्हें देखने को और बहुत–सी चीजें मिल जाती हैं। बहरहाल कोई खास चिंता की बात नहीं। इस देश के लोग पीढ़ियों से सिर्फ जाति देखते आ रहे हैं, व्यक्तित्व देखने की उन्हें न आदत है न परवाह है। संत लोग चिल्लाकर थक गये कि 'मोल करो तलवार को, पड़ा रहन दो म्यान' के मोल भाव से बाजार गर्म। व्यक्तित्व को यहाँ पूछता ही कौन है। अर्थमात्र जाति है, छंदमात्र व्यक्ति है। अर्थ आसानी से पहचाना जा सकता है क्योंकि वह धरती पर चलता है, छंद आसानी से पकड़ में नहीं आता, वह आसमान में उड़ा करता है।

बात यह है कि जब में कहता हूँ कि देवदारु सुंदर है तो सुननेवाले सुंदर का एक सामान्य अर्थ ही लेते हैं। हजार तरह के सुंदर पदार्थों में रहने वाला एक सामान्य सौंदर्य–धर्म। सौंदर्य का कौन–सा विशिष्ट रूप मेरे हृदय में उल्लास तरंगित कर रहा है यह बात बस, मैं ही जानता हूँ। अगर मुझमें इस बात को कहने की शक्ति नहीं हुई तो यह गूँगे का गुड़ बनी रह जाएगी। जिसमें शक्ति होती है, वह कवि कहलाता है। अनेक प्रकार के कौशल से वह इस बात को कहने का प्रयत्न करता है फिर भी शब्दों का सहारा तो उसे लेना ही पड़ता है, शब्द सदा सामान्य अर्थ को प्रकट करते हैं। कवि विशिष्ट अर्थ देना चाहता है। वह छंदों के सहारे, उपमान योजना के बल पर, ध्वनि–साम्य के द्वारा विशिष्ट अर्थ को समझ पाते हैं? बिल्कुल नहीं। कोई बड़भागी होता है जिसके दिल की धड़कन कवि के दिल की धड़कन के साथ ताल मिला पाती है। कविके हृदय के साथ मिल जाय उसे 'सहृदय' कहा जाता है। देवदारु की ऊर्ध्वा शिखा–शोभा मेरे हृदय में एक विशेष उल्लास पैदा करती है। मेरे पास कवि कौशल नाम की चीज नहींहै। मैं अपने विशिष्ट अनुभवों का साधारणीकरण नहीं कर पा रहा हूँ। कवि होता तो करा लेता। उपमानों की छटा खड़ी कर देता, सहृदय के चित्त को अपने चित्त के ताल परनृत्य कराने योग्य छंद ढूँढ़ लेता, ध्वनियों की नियतसंचारी समता को ऐसा समाँ बाँधता कि सुननेवाले का मन–मयूर की भाँति नाच उठता, पर मेरे भाग्य

BHDC-112_Hindi.indd 106 4/27/2022 3:29:21 PM

में यह कुछ भी नहीं। केवल आँख फाड़कर देखता हूँ, पाषाण की कठोर छाती भेदकर देवदारु न जाने किस पताल से न जाने अपना रस खींच रहा है और कम ह्रस्व छाया का वितान तानता हुआ उर्ध्वलोक की ओर किसी अज्ञात निर्देशक के तर्जनी–संकेत की भाँति कुछ दिखा रहा है। यह इतनी उँगलियाँ क्या यों ही उठी हुई है? कुछ बात है, अवश्य कुछ रहस्य है। भीतर ही भीतर अनुभव कर रहा हूँ पर बता सकूँ ऐसी भाषा कहाँ है। हाय, मैं असमर्थ हूँ, मूक हूँ! मीमांसकों का एक संप्रदाय मानता था कि शब्द का अर्थ वहाँ तक जाता है जहाँ तक वक्ता ले जाता है वक्ता की इच्छा को **विवक्षा** कहते हैं। ये लोग कहते हैं कि जब जैमिनि मुनि ने कहा था कि 'यत्परः शब्दः स शब्दार्थः' तो उनका यही मतलब था। मेरा रोम–रोम अनुभव कर रहा है कि मुनि की बात का ऐसा अर्थ नहीं होना चाहिए। कहाँ विवक्षा इतनी दूर तक ले जाती है? सुंदर शब्द का प्रयोग करके मैं जो कहना चाहता हूँ वह कहाँ प्रकट हो पा रहा है। कहना तो बहुत चाहता हूँ, कोई, समझे भी तो नहीं शब्द उतना ही बता पाता है जितना लोग समझते हैं। वक्ता जो कहना चाहता है उतना कहाँ बता पाता है वह? दुनिया में कवियों की जो कदर है वह इसीलिए है कि वे जो अनुभव करते हैं उसे श्रोता के चित्त में प्रविष्ट भी करा सकते हैं। प्रेषणधर्मिता उनके कहे का एक प्रधान गुण है। मैं नहीं पहुँचा पाता हूँ उस अर्थ को जिसे मेरा मन अनुभव कर रहा है। क्योंकि मैं शब्दों और छंदों का ऐसा अस्त्र नहीं बना पाता हूँ, जो मेरी अनुभूतियों को लेकर तीर की तरह श्रोता के हृदय में चुभ जाये। अर्थ निश्चय ही वक्ता की इच्छा के अधीन नहीं है। वह सामाजिक स्वीकृति चाहता है। उसमें लय नहीं, संगीत नहीं, गति नहीं, वह स्थिर है। शब्दों के गतिशील आवेग से वह हिलता है, भरभराता है, नये–नये परिवेश में सजता है और तब कहीं नया पैदा करता है। अर्थ में लय नहीं होता, वह लय के सहारे नया अर्थ देता है।

लेकिन देवदारु है शानदार वृक्ष। हवा के झोंको से जब हिलता है तो इसका अभिजात्य झूम उठता है कालिदास ने इसी हिमालय के उस भाग की, जहाँ से भागीरथी के निर्झर झरते रहते हैं, शीतल–मंद–सुगंध पवन की चर्चा की थी, उन्होंने शीतलता को भागीरथी के निर्झर सीकरों की देन कहा, सुगंधि को आसपास के वृक्षों के पुष्पों के संपर्क की बदौलत घोषित किया, लेकिन मंदी के लिए 'मुहुःकंपित देवदारु' को उत्तरदायी ठहराया। देवदारु के बारंबार कंपित होते रहने में एक प्रकार की मस्ती अवश्य है। युग–युगांतर की संचित अनुभूति ने ही मानो यही मस्ती प्रदान की है। जमाना बदलता रहा है, अनेक वृक्षों और लताओं ने वातावरण से समझौता किया है, कितने ही मैदान में जा बसे हैं और खासी प्रतिष्ठा प्राप्त कर ली है, लेकिन देवदारु है कि नीचे नहीं उतरा, समझौते के रास्ते नहीं गया और उसने अपनी खानदानी चाल नहीं छोड़ी। झूमता हैतो ऐसा मुसकराता हुआ मानों कह रहा हो मैं सब जानता हूँ, सब समझता हूँ। तुम्हारे करिश्में मुझे मालूम हैं, मुझसे तुम क्या छिपा सकते हो – 'मों ते दुरैहौ कहा सजनी निहुरे–निहुरे कहुँ ऊँट की चोरी!' हजारों वर्ष के उतार–चढ़ाव का ऐसा निर्मम साथी दुर्लभ है।

बोध प्रश्न

5. शिव की साधना और कवियों की कविता की शुरुआत लेखक के अनुसार कहाँ से शुरू हुई थी?

   क) सती मैया के चौरा से ख) देवदारु वृक्ष के नीचे

   ग) कटहल के पेड़ से घ) कोई नहीं

6. लेखक के अनुसार किसने अपनी खानदानी चाल नहीं छोड़ी?

   क) देवदारु ख) ब्राह्मण

   ग) बबूल घ) नेता

BHDC-112_Hindi.indd 107 4/27/2022 3:29:21 PM

7. भूतों में जैसे मुड़कट्टे होते हैं, आदमियों में भी कुछ होते हैं। यह किस निबंध में कहा गया है।

   क) कुटज ख) अशोक के फूल

   ग) देवदारु घ इनमे से कोई नहीं

8. इस निबंध में मूर्ख पंडित अपनी विद्वता कैसे मनवाता था?

   क) लाठी, डंडा और फचफ़चाह्ट से ख) ब्राह्मणवाद से

   ग) दोनों से घ) इनमें से कोई नहीं

9. 'हजारों वर्ष के उतार–चढ़ाव का ऐसा निर्मम साथी दुर्लभ है।' यह बात किसने कही है?

   क) नामवर सिंह ने ख) आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी ने

   ग) आचार्य शुक्ल ने घ) इनमे से कोई नहीं

10. इस निबंध से क्या शिक्षा मिलती है?

    क) समाज में बने रहने के लिए संघर्ष जरुरी है

    ख) पाखंड जरुरी है

    ग) अन्धविश्वास से व्यक्ति आगे निकल सकता है

    घ) जीवन में फकीरी का सन्देश

5.3 निबंध का सार

इस इकाई में हम 'देवदारु' निबंध का सारांश अपने शब्दों में लिखने की कोशिश करेंगे। देवदारु निबंध में लेखक कहता है यह पेड़ अत्यंत पुराना है, इसकी उचाँई इतनी है मानो पर्वत की चोटी को पार करते हुए देवलोक की तरफ जा रहा हो। इस पेड़ की शाखाएँ इस तरह से फैली है कि लगता है छाया इस पेड़ की दासी हो। ऐसा लगता है की यह पेड़ किसी सुलझे हुए कवि के चित का मूर्तिमान छंद है। कालिदास ने बताया है कि उन्होंने इस प्रयोजनातीत (निष्प्रयोजन तो कैसे कहें) समाधि के लिए देवदारु–द्रुम के नीचे वेदिका बनायी थी। शायद इसलिए कि देवदारु भी अर्थातीत छंद है। एकाग्रीभाव छंद की आत्मा है। अगर यह न होता तो शिव का तांडव बेमेल धमाचौकड़ी और लस्टम–पस्टम उछल–कूद के सिवा और कुछ न होता। तांडव की महिमा आनंदोमुखी एकाग्रता में है।

निबंधकार देवदारु की महता स्थापित करते हुए लिखता है कि तुक अर्थ में रहता है ध्वनि–साम्य केतुक में कुछ न कुछ अर्थचारुता होनी चाहिए। ध्वनिसाम्य साधन है, तुक अर्थ का धर्म होना चाहिए।बहुत से लोग अंतर की आवाज को आँख मूँदकर मान लेते हैं। मैं नहीं मान पाता। आँखें खोलने पर भी यदि अंतर की आवाज ठीक जँचे तो मान लेना चाहिए। क्योंकि उस अवस्था में भीतर और बाहर का तुक मिल जाता है। शिवजी ने अंतर और बाहर का तुक मिलाने के लिए ही तो देवदारु को चुना था। अंतर्यामी भी बहिर्यामी के साथ ताल मिलाते रहें यही उचित है।

लेखक का मानना है कि जीवन सिर्फ तुकबंदी से नहीं चलता ,बल्कि जीवन फक्कड़ मस्ती का दूसरा रूप है। लेखक लिखता है कि 'सोचता हूँ, उस समय देवदारु की क्या हालत हुई होगी। क्या इतनी ही फक्कड़ाना मस्ती से झूम रहा होगा? क्या ऐसा ही बेलौस खड़ा होगा? शायद हाँ, क्योंकि शिव की समाधि टूटी थी, देवदारु का तांडव–रस–भाव विवर्जित महानृत्य – नहीं टूटा था'।

BHDC-112_Hindi.indd 108 4/27/2022 3:29:21 PM

साथ ही लेखक शिव और देवदारु के रिश्ते को बार बार रेखांकित करता है, लेकिन लेखक देवदारु की अहमियत बताते हुए कहता है कि 'महादेव! उस दिन देवदारु चूक गया। वह सब देखता रहा। इतना बड़ा अनर्थ हो गया और आपने अवधूतपन का बाना नहीं छोड़ा। वह महावृक्ष नहीं बन सका 'देवदारू' बन गया। आँखें खोले रहना भी कोई तुक की बात है! महावृक्ष वनस्पति होते हैं, जिनमें भावुकतातो नहीं पर सार्थकता होती है, जो फूल तो नहीं देते पर फल देते हैं।'

लेखक छंद और अर्थ के बीच जीवन को तलाशता है, 'मुमकिन है, इसका पुराना नाम देवतरु हो। देवता का तरु नहीं, देवता भी और तरु भी। देव होकर वह छंद है, तरु होकर अर्थ है।' परन्तु इधर कवि लोग हैं उन्हें कि हमेशा कुछ देखकर कुछ न कुछ लगता ही रहता है। खुले–आम कहते हैं कि मुझे ऐसा लग रहा है। दुनिया की ओर भी देखो। वह तुम्हें पागल कहेगा। पागल को भी तो कुछ–न–कुछ लगता रहता है। मगर दुनिया को देखता हूँ तो हैरत में पड़ जाता हूँ। कवि को जो कुछ लगता है उसका वाह–वाह करके उसे सिर उठा लेती है। कुछ समझ में नहीं आता। 'हाँ ही बौरी बिरह बस के बौरौ सब गाँव'।

जीवन की विविधता में सामाजिक जीवन की भूमिका के साथ लेखक विरहणी और उसके दुःख को समाज से जोडकर देखता है : विरहिणी की दारूण–व्यथा अब सब के चित्त की सामान्य अनुभूति के साथ ताल मिलाकर चलने लगी। पागल का 'लगना' एक का लगना होता है, कवि का लगना सबको लगने लगता है। बात उलट कर कही जाय तो इस प्रकार होगी – जिसका लगना सबको लगे वह कवि है, जिसका लगना सिर्फ उसे ही लगे, औरों को नहीं, वह पागल। लगने–लगने में भी भेद है। जो सबको लगे, वह अर्थ है, जो एक को ही लगे, वह अनर्थ है।अर्थ सामाजिक होता है।'

लोक जीवन में कर्मकांड और अन्धविश्वास की अपनी परम्परा है, लेखक देवदारु को वहाँ भी ब्राह्मणों के औजार के रूप में बताया है : 'पंडितजी केवल बड़े दिग्गज विद्वानों को ही नहीं, आसपास के भूतों को भी पराजित करने में अपना प्रतिद्वंद्वी नहीं मानते थे। गायत्री का मंत्र जो उनके मुँह से आल्हा जैसा सुनाई देता था और देवदारु की लकड़ी उनके अस्त्र थे। क्या इन मुड़कट्टों को देवदारु की लकड़ी से पराभूत किया सकता है? करने का प्रयत्न ही कर रहा हूँ। पंडितजी के पास तो फचफची गायत्री थी, वह कहाँ पाऊँ ,मन की सारी भ्रांति को दूर करनेवाले देवदारु तुम्हें देखकर मन श्रद्धा से जो भर जाता है, वह अकारण नहीं है। तुम भूत भगवान हो, तुम वहम–मिटावन हो, तुम भ्रांतिनसावन हो। तुम्हें दीर्घकाल से जानता था पर पहचानता नहीं था, अब पहचान भी रहा हूँ। तुम देवता के दुलारे हो महादेव के प्यारे हो, तुम धन्य हो।

निबंधकार देवदारु के साथ सिद्धांत और व्यवहार की बात भी करते है – मिथकीय आवरणों को हटाकर उसे तथ्यानुयायी अर्थ देने वाले लोग मनोवैज्ञानिक कहलाते हैं, आवरणों की सार्वभौम रचनात्मकता को पहचानने वाले कला समीक्षक कहलाते हैं।'

साथ ही देवदारु भी सब एक से नहीं होते। मेरे बिलकुल पास में जो है, वह जरठ भी है, खूसट भी। जरा उसके नीचे की ओर जो है, वह सनकी–सा लगता है। एक मोटे राम खड्ड के एकप्रांत पर उगे हैं, आधे जमीन में, आधे अधर में, आधा हिस्सा ठूँठ, आधा जगर–मगर, सारे कुनबे के पाधा जान पड़ते हैं। एक अल्हड़ किशोर है, सदा हँसता–सा, कवि जैसा लगता है। जी करता है इसे प्यार किया जाए।केवल आँख फाड़कर देखता हूँ, पाषाण की कठोर छाती भेदकर देवदारु न जाने किस पताल से न जाने अपना रस खींच रहा है और कम ह्रस्व छाया का वितान तानता हुआ उर्ध्वलोक की ओर किसी अज्ञात निर्देशक के तर्जनी–संकेत की भाँति कुछ दिखा रहा है। यह इतनी उँगलियाँ क्या यों ही उठी हुई है? कुछ बात है, अवश्य कुछ रहस्य है। भीतर ही भीतर अनुभव कर रहा हूँ पर बता सकूँ ऐसी भाषा कहाँ है।

BHDC-112_Hindi.indd 109 4/27/2022 3:29:21 PM

सचमुच कालिदास ने देवदारु को शानदार वृक्ष कहा है।' हवा के झोंको से जब हिलता है तो इसका अभिजात्य झूम उठता है हिमालय के उस भाग की, जहाँ से भागीरथी के निर्झर झरते रहते हैं, शीतल–मंद–सुगंध पवन की चर्चा की थी, उन्होंने शीतलता को भागीरथी के निर्झर सीकरों की देन कहा, सुगंधि को आसपास के वृक्षों के पुष्पों के संपर्क की बदौलत घोषित किया, लेकिन मंदी के लिए 'मुहुःकंपित देवदारु' को उत्तरदायी ठहराया। देवदारु के बारंबार कंपित होते रहने में एक प्रकार की मस्ती अवश्य है।'

बोध प्रश्न

11. देवदारु आभिजात्य पेड़ है।

    क) सही ख) गलत

12. सचमुच कालिदास ने .....को शानदार वृक्ष कहा है।

    क) पीपल ख) महुआ

    ग) देवदारु घ) पकड़ी

13. जिसका लगना सबको लगे वह ..... है, जिसका लगना सिर्फ उसे ही लगे, औरों को नहीं, वह पागल।

    क) कवि ख) ढोंगी ग) कर्मकांडी

5.4 सन्दर्भ सहित व्याख्या

1. जिस आचार्य ने पतिपाटीविहित निष्टजनानुमोदित 'सज्जा' को 'छाया' नाम दिया था वह जरूर इस पेड़ की शोभा से प्रभावित हुआ था। पेड़ क्या है, किसी सुलझे हुए कवि के चित्तका मूर्तिमान छंद है – धरती के आकर्षण को अभिभूत करके लहरदार वितानों की शृंखला को सावधानी से सँभालता हुआ, विपुल–व्योम की ओर एकाग्रीभूत मनोहर छंद। कैसी शान है, गुरुत्वाकर्षण के जड़–वेग को अभिभूत करने की कैसी स्पर्धा है – प्राण के आवेग की कैसी उल्लासकार अभिव्यक्ति है!

सन्दर्भ : प्रस्तुत गद्यांश 'देवदारु ' निबंध से लिया गया है। इस निबंध के लेखक आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी है

लेखक देवदारु पेड़ की विशालता और उसकी छाया की महिमा मंडन कर रहा है।

व्याख्या : लेखक देवदारु पेड़ का उल्लेख करते हुए कहता है कि जो भी महान आचार्य ने सज्जा को छाया नाम दिया है, वे इसी पेड़ के सौदर्य को देखा होगा। सचमुच यह पेड़ न होकर ऐसा लगता है कि यह किसी कवि का मूर्तिमान छंद हो जो धरती के सौदर्य को बढ़ाते हुए कवि मन को प्रभावित किया होगा द्य इस पेड़ की शृंखला पहाड़ो के मध्य ऐसे मूर्तिमान है जैसे किसी महान कवि की रचना विधान। यह पेड़ अपनी उँचाई में आसमान को छूने के बाद भी अपनी जड़ों से बहुत मजबूत है, ऐसा लगता है जैसे गुरुत्वाकर्षण बल से बराबरी कर रहा हो। देवदारु को देखकर ऐसा लगता है कि इस पेड़ में जीवन की अभिव्यक्ति है।

विशेष : इस गद्यांश में अतिरिक्त पांडित्य बोध है, जिसे सामान्य पाठक आसानी से नहीं समझ सकता है।

भाषा तत्सम प्रधान है।

लेखन ने देवदारु पेड़ की महता में अतिश्योक्ति भर दिया और उसका महानता का वर्णन किया है।

कवि, कविता और जीवन को प्रतीकात्मक ढंग से प्रस्तुत किया गया है।

BHDC-112_Hindi.indd 110 4/27/2022 3:29:21 PM

लेखक ने देवदारु के सौदर्य बोध को जीवन की अभिव्यक्ति के रूप में देखा है।

लेखक वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ पर्वतीय सौदर्यबोध को दर्शाया है।

लेखकीय लोकबोध और उसके प्रति लगाव देखा जा सकता है।

भाषा खड़ीबोली हिंदी है।

2. ध्वनिसाम्य साधन है, तुक अर्थ का धर्म होना चाहिए। मगर कहना खतरे से खाली नहीं है। किसी नये आलोचक ने अर्थ को लय की वकालत की है। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि सारी पंडित–मंडली उस गरीब पर बरस पड़ी है। अगर तुक अर्थ में मिल सकता है तो लय क्यों नहीं मिल सकता। मेरे अंतर्यामी कहते हैं कि तुक तो अर्थ में नहीं रहता है लय नहीं रहता। बहुत से लोग अंतर की आवाज को आँख मूँदकर मान लेते हैं। मैं नहीं मान पाता। आँखें खोलने पर भी यदि अंतरकी आवाज ठीक जँचे तो मान लेना चाहिए, क्योंकि उस अवस्था में भीतर और बाहर का तुक मिल जाता है द्य

सन्दर्भ : निबंध और निबंधकार का नाम (देवदारु, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी)

लेखक तुक और लय के बीच देवदारु को केंद्र में रखकर जीवन की व्याख्या करता ।

व्याख्या : तुक और लय आलोचकीय मंडली और जीवन की लोकपक्षीय मिठास

विशेष : लेखक ने देवदारु के सौदर्य बोध को जीवन की अभिव्यक्ति के रूप में देखा है।

लेखक वैज्ञानिक दृष्टिकोण के साथ पर्वतीय सौदर्यबोध को दर्शाया है।

लेखकीय लोकबोध और उसके प्रति लगाव देखा जा सकता है।

भाषा खड़ीबोली हिंदी है।

(कुछ विशेष पाठक स्वयं करे)

3. हृदय के भीतर जलनेवाली विरहाग्नि ने उसे किसी काम का नहीं छोड़ा। हे भगवान, तुम ऐसा कुछ नहीं कर सकते कि सारे गाँव के समान इस बालिका को भी चंद्रमा उतना ही शीतल लगे जितना औरों को लगता है! अर्थात् विरहिणी की दारूण–व्यथा अब सब के चित्त की सामान्यअनुभूति के साथ ताल मिलाकर चलने लगी। पागल का 'लगना' एक का लगना होता है, कवि का लगना सबको लगने लगता है। बात उलट कर कही जाय तो इस प्रकार होगी – जिसका लगना सबको लगे वह कवि है, जिसका लगना सिर्फ उसे ही लगे, औरों को नहीं, वह पागल। लगने–लगने में भी भेद है। जो सबको लगे, वह अर्थ है, जो एक को ही लगे, वह अनर्थ है।अर्थ सामाजिक होता है।

सन्दर्भ : निबंध और निबंधकार का नाम (देवदारु, आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी)

लेखक विरहणी को केंद्र में रखकर जीवन की व्याख्या करता है।

व्याख्या : कवि, कविता और विरहणी का दुःख

जीवन की लोकपक्षीय मिठास

अर्थ सामाजिक होता है

विशेष : लेखक ने देवदारु के सौदर्य बोध को जीवन की अभिव्यक्ति के रूप में देखा है।

लेखक ने विरहणी की पीड़ा और प्रकृति की पीड़ा को मिलाकर देखा है।

लेखकीय लोकबोध और उसके प्रति लगाव देखा जा सकता है।

भाषा खड़ी बोली हिंदी है।

(कुछ विशेष पाठक स्वयं करे)

BHDC-112_Hindi.indd 111 4/27/2022 3:29:21 PM

5.5 अंतर्वस्तु

इस इकाई के अंतर्गत निबंध के भाव और विचारगत विशेषताओं पर बात करेंगे।

इस इकाई के अंतर्गत 'देवदारु' नामक निबंध की अंतर्वस्तु पर विचार करेंगे। किसी भी रचना की अंतर्वस्तु उसके भाव पक्ष और कला पक्ष पर आधारित होता है, इसे समझने की भाषा में विचार पक्ष और भाव पक्ष भी कहा जा सकता है।

5.5.1 विचार पक्ष

आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी का निबंध रचना अपनी लालित्यबोध के लिए महत्वपूर्ण है। लेखक ने सामाजिक–सांस्कृतिक तथ्यों के मूल्यांकन के लिए कुटज, अशोक के फूल, देवदारु इत्यादि पेड़ों को आधार बनाकर जीवन की कठिनता और उसमे जीवटता भरने की कोशिश करते है। लेखक अनेक दृष्टान्तों और सांस्कृतिक सूचनाओं के माध्यम से लोकजीवन की प्रासंगिकता को बनाये रखने में विश्वास रखते हैं। लेखक पेड़ को कवि और कविता से जोडकर देखता है – 'पेड़ क्या है, किसी सुलझे हुए कवि के चित्त का मूर्तिमान छंद है – धरती के आकर्षण को अभिभूत करके लहरदार वितानों की शृंखला को सावधानी से सँभालता हुआ, विपुल–व्योम की ओर एकाग्रीभूत मनोहर छंद।'

लेखक मिथकीय पात्रों के साथ पेड़ के संबंधों की नई व्याख्या करता है। शिव तांडव और जीवन में उसका अर्थ की व्याख्या इससे अच्छा क्या हो सकता है उन्होंने जिस नृत्य का प्रवर्तन किया उसे 'तांडव' कहा जाता है। 'तांडव' अर्थात् 'तंडु' मुनि द्वारा प्रवर्तित 'रस भाव–विवर्जित' नृत्य! रस भी अर्थ है, भाव भी अर्थ है, परंतु तांडव ऐसा नाच है, जिसमें रस भी नहीं। भाव भी नहीं नाचनेवाले का कोई उद्देश्य नही, मतलब नहीं, 'अर्थ' नहीं।'

लेखक के लिए तुक जीवन में अर्थ को प्रासंगिक बनाये रखने में है ,अर्थात 'तुक वह है जो देवदारु की गगनचुंबी शिखा और समाधिस्थ महादेव की निवात–निष्कंप प्रदीप की ऊर्ध्वगामिनी ज्योति में है! अर्थात् तुक अर्थ में रहता है ध्वनि–साम्य केतुक में कुछ न कुछ अर्थचारुता होनी चाहिए। ध्वनिसाम्य साधन है, तुक अर्थ का धर्म होना चाहिए द्य इसलिए प्रत्येक व्यक्ति के मन में कुछ न कुछ लगता ही रहता है। मजेदार बात यह है कि व्यक्ति का लगना अलग–अलग होता है। 'अ–लग' अर्थात् जो न लगे। लगता है पर नहीं लगता, यह भी कोई तुक की बात हुई? तुक की बात तब होती जब लगना 'अलग' लगना न होता।

लेखक का विचार पक्ष लोकजन से गुजरता है, इसलिए लेखक कुछ भी चर्चा करे लेकिन अर्थ तक पहुँचते–पहुँचते वह सामान्य धरातल पर आ जाते है। लेखक के लिए सुख–दुःख दोनों जरुरी है अर्थात हृदय के भीतर जलने वाली विरहाग्नि ने उसे किसी काम का नहीं छोड़ा। हे भगवान, तुम ऐसा कुछ नहीं कर सकते कि सारे गाँव के समान इस बालिका को भी चंद्रमा उतना ही शीतल लगे जितना औरों को लगता है! अर्थात् विरहिणी की दारूण–व्यथा अब सब के चित्त की सामान्य अनुभूति के साथ ताल मिलाकर चलने लगी। पागल का 'लगना' एक का लगना होता है, कवि का लगना सबको लगने लगता है। बात उलट कर कही जाय तो इस प्रकार होगी – जिसका लगना सबको लगे वह कवि है, जिसका लगना सिर्फ उसे ही लगे, औरों को नहीं, वह पागल। लगने–लगने में भी भेद है। जो सबको लगे, वह अर्थ है, जो एक को ही लगे, वह अनर्थ है। अर्थ सामाजिक होता है।

लेखक का लोक पक्षीय रूप तब और महत्वपूर्ण हो जाता है जब वह मिथक, अन्धविश्वास के साथ लोकविश्वास की बात करता है ऐसे में लेखक का विचार है कि देवदारु नाम केवल नाम ही नहीं है। मैंने अपने गाँव के एक महान भूत–भगावन ओझा को देवदारु की लकड़ी से भूत भगाते देखा है। ''मन की सारी भ्रांति को दूर करने वाले देवदारु

BHDC-112_Hindi.indd 112 4/27/2022 3:29:21 PM

तुम्हें देखकर मन श्रद्धा से जी भर जाता है, वह अकारण नहीं है। तुम भूत भगवान हो, तुम वहम–मिटावन हो, तुम भ्रांति नसावन हो। तुम्हें दीर्घकाल से जानता था पर पहचानता नहीं था, अब पहचान भी रहा हूँ। तुम देवता के दुलारे हो महादेव के प्यारे हो, तुम धन्य हो।'

जीवन में संघर्ष के मध्य सौदर्य को देखना लेखक का अतिरिक्त दायित्वबोध है, इसे समझने के लिए शास्त्र को छोडकर लोक की तरफ रूचि पैदा करनी होगी, तभी पेड़, पौधों, जंगल, पर्वत में जीवन को देखा जा सकता है लेखक लिखता है कि 'तुम्हारे करिश्में मुझे मालूम हैं, मुझसे तुम क्या छिपा सकते हो – 'मों ते दुरैहौ कहा सजनी निहुरे–निहुरे कहुँ ऊँट की चोरी!' हजारों वर्ष के उतार–चढ़ाव का ऐसा निर्मम साथी दुर्लभ है।'

5.5.2 भाव पक्ष

आचार्य शुक्ल की लोकमंगल की स्थापना को ख़ारिज करते हुए तुलसी की अपेक्षा लोकवादी कबीर को आदर्श बनाने वाले महान निबंधकार आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी के निबंध देवदारु का भाव पक्ष उनके अन्य निबंधों की तरह ही लोक सौदर्य से ओतप्रोत है।

देवदारु निबंध में भी लेखक ने देवदारु पेड़ के माध्यम से भारतीय समाज के अनेक पक्षों को रखने की कोशिश की है। लेखक देवदारु की महता और उसके चरित्र वर्णन में सर्व प्रथम शंकर और उनके तांडव का जिक्र करते हैं। लेखक तुक और लय के साथ छंद और अर्थ की बात भी बार.बार करता है? भारतीय समाज व्यवस्था में शिव लोक जीवन के देवता रहे हैं और उनका चरित्र अनगढ़ समाज के लिए सर्वाधिक उपयोगी भी है। ऐसे में देवदारु और शंकर का उल्लेख का भाव यह है कि देवदारु और शंकर की अहमियत लोकरंजक रूप में अधिक महत्वपूर्ण है।

देवदारु की महता और प्रासंगिकता के सन्दर्भ को लेखक कालिदास और उनकी कविता से जोड़ कर देखता है। यहाँ भी लेखक छंद और अर्थ के मध्य जीवन की व्यापकता को पहचानने की बात करता है। बिहारी द्वारा निरुपित विरहणी का दर्द तब सामाजिक हो जाता है जब विरहणी के विरह को बढ़ाने वाले उपमान विरहणी का साथ देने लगे। यहाँ लेखक का यह भाव है कि जीवन सिर्फ विरह से जीना संभव नहीं है जैसे देवदारु पहाड़ों पर रहकर भी शंकर को योग साधना की जगह देता है और कवियों के दिल में जीवन की संघर्ष को समझने में मदद करता है।

लेखक अपने अन्य निबंधों की तरह इस निबंध में भी आलोचक को दूर रखता है और जीवन की निर्ममता के मध्य एक मिठास उत्पन्न करता है। इसलिए लोकजीवन में यही देवदारु की छड़ी लोगो के भूत भगाने में भी काम आता है। यद्यपि लेखक ने पंडित के चालाकी को सबसे पहले रेखांकित किया है लेकिन लोक विश्वास का अपना अलग मौखिक इतिहास है।

समग्रतः लेखकीय सामाजिक सांस्कृतिक बोध के भीतर लोकपक्षीय स्वरूप स्पष्ट दिखाई देता है, लेखक के लिए देवदारु एक माध्यम है जबकि उसका उद्देश्य मनुष्य जीवन में मानवता की स्थापना ही है।

5.6 लेखकीय अभिव्यक्ति

हिंदी साहित्य इतिहास के मूल्याकंन के सन्दर्भ में आचार्य शुक्ल और आचार्य द्विवेदी अपने–अपने योगदान के हिसाब से हिंदी साहित्य में उल्लेखनीय कार्य कर रहे थे। दोनों ही साहित्य के क्षेत्र मील का पत्थर हैं। दोनों की मौजूदगी हिंदी साहित्य के लिए

BHDC-112_Hindi.indd 113 4/27/2022 3:29:21 PM

अपरिहार्य है। इस इकाई में द्विवेदी जी के व्यक्तित्व और कृतित्व के साथ लेखकीय पक्षधरता पर भी बात होगी।

द्विवेदी जी का जन्म 1907 ई. में उत्तरप्रदेश के बलिया जिले के एक गाँव में हुआ था। माता का नाम ज्योतिष्मती और पिता का नाम अनमोल द्विवेदी था। द्विवेदी जी अनेक भाषाओं के जानकर थे। इन्होने इतिहास लेखन से लेकर निबंध, उपन्यास व अन्य रचनाये भी की हैं। निबंधों में उल्लेखनीय योगदान के लिए इन्हें 1973 में आलोक पर्व निबंध संग्रह के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार प्राप्त हुआ। द्विवेदी जी बहुमुखी प्रतिभा के धनी थे।

इनकी कुछ महत्वपूर्ण कृतियाँ निम्नलिखित है :

- हिन्दी साहित्य का उद्‌भव और विकास
- हिन्दी साहित्य की भूमिका,
- मध्यदकालीन बोध का स्व रूप
- विचार–प्रवाह ,
- कल्पतरु
- गतिशील चिंतन
- साहित्य सहचर
- नाखून क्यों बढ़ते हैं
- अशोक के फूल
- कल्प लता
- विचार और वितर्क
- विचार–प्रवाह
- कुटज
- आलोक पर्व
- विश के दन्त
- कल्पतरु

लेखक के सन्दर्भ में डॉ सुबोध कुमार सिंह ने उचित ही कहा है कि – 'आचार्य हजारी प्रसाद द्विवेदी भारतीय मनीषा के प्रतीक और साहित्य एवं संस्कृति के अप्रतिम व्याख्याकार माने जाते हैं और उनकी मूल निष्ठा भारत की पुरानी संस्कृति में है लेकिन उनकी रचनाओं में आधुनिकता के साथ भी आश्चर्यजनक सामंजस्य पाया जाता है। आचार्य द्विवेदी को उनके निबंधों के लिए विशेष ख्याति मिली। निबंधों में विषयानुसार शैली का प्रयोग करने में इन्हें अद्‌भुत क्षमता प्राप्त है। तत्सम शब्दों के साथ ठेठ ग्रामीण जीवन के शब्दों का सार्थक प्रयोग इनकी शैली का प्रमुख गुण रहा है।' साधारण विषयों का सूक्ष्मतापूर्वक अवलोकन और विश्लेषण–विवेचन उनकी निबंधकला का विशिष्ट व मौलिक गुण है।

आचार्य द्विवेदी जी आधुनिक हिंदी साहित्य के बहुमुखी व्यक्तित्व के स्वामी हैं। उनके समस्त निबंध साहित्य का चिंतन और सृजन मानव केंद्रित ही रहा है । उनका मानना है कि "मनुष्य ही साहित्य का लक्ष्य है जिस कृति से यह उद्देश्य सिद्ध नहीं होता, वह वाग्जाल है।"

सांस्कृतिक समझ के साथ द्विवेदी जी ललित निबंधों की एक नई परम्परा की शुरुआत करते हैं, इनमें धर्म, संस्कृति और साहित्य को निरुपित किया गया है। 'क्या आपने मेरी

BHDC-112_Hindi.indd 114 4/27/2022 3:29:21 PM

रचना पढ़ी', 'आम फिर बौरा गए', 'बसंत आ गया', 'नाखून क्यों बढ़ते है, 'अशोक के फूल', 'शिरीष के फूल', 'कुटज', इत्यादि इनके ललित निबंध है। देवदारु भी उसी में से एक ललित निबंध है।

द्विवेदी जी की भाषा–शैली के बारे में डॉ सुबोध ने कहा है कि – 'निबंधों में प्रयुक्त भाषा और विविधता से युक्त शैली भी आपके लेखन की विशेषता है । भाषा के अंतर्गत भारतीय भाषाओं एवं बोलियों के अतिरिक्त संस्कृत एसं विदेशी भाषाओं का भी प्रयोग प्रभावशाली ढंग से किया गया है– "परन्तु वे स्वभाव से फक्कड़ थे' साथ ही' विषय, भाषा, शैली, चिंतन और अनुभूति सभी दृष्टियों से आचार्य जी का निबंध साहित्य उनके समकालीन एवं पूर्ववर्ती निबंध लेखकों के लिए अनुकरणीय तथा प्रेरणा प्रदान करने का समृद्ध भण्डार है– "इन निबंधों में आशा, विश्वास, राग–विराग, धारणा, मान्यता, कल्पना–अनुभूति, आदर्श, यथार्थ, विलास–विनोद, कला, विद्या आदि की अभिव्यक्ति अत्यन्त गहनता, तीव्रता एवं सजगता के साथ हुई है।'

बोध प्रश्न

14. लेखक को किस रचना के लिए साहित्य अकादमी पुरस्कार मिला था।

    क) आलोक पर्व　　ख) अशोक के फूल

    ग) कुटज　　घ) इनमे से कोई नहीं

15. क्या द्विवेदी जी ने इतिहास लेखन भी किया है?

    क) नहीं　　ख) हाँ

5.7 संरचना शिल्प

इस इकाई के अंतर्गत 'देवदारु' नामक निबंध के संरचना शिल्प पर बात करेंगे। किसी भी रचना के दो भाग होते हैं एक भाग भावपक्ष से संबंधित होता है, दूसरा भाग शिल्पपक्ष से सम्बंधित। संरचना शिल्प के अंतर्गत भाषा और शैली पर विचार किया जाएगा। यह सर्वविदित है कि भाषा विचारों के आदान–प्रदान का सबसे सशक्त माध्यम होती है, ऐसे में किसी रचना की भाषा ही पाठक तक पहुँचने में सबसे महत्वपूर्ण भूमिका निभातीहै।

5.7.1 भाषा

आचार्य द्विवेदी जी की भाषा के सन्दर्भ में यह बात ठीक कहा गया है कि 'द्विवेदी जी की भाषा परिमार्जित खड़ी बोली है। उन्होंने भाव और विषय के अनुसार भाषा का चयनित प्रयोग किया है। 'उनकी भाषा के दो रूप दिखलाई पड़ते हैं – (1) प्राँजल व्यावहारिक भाषा, (2) संस्कृतनिष्ठ शास्त्रीय भाषा। प्रथम रूप द्विवेदी जी के सामान्य निबंधों में मिलता है। इस प्रकार की भाषा में उर्दू और अंग्रेज़ी के शब्दों का भी समावेश हुआ है। द्वितीय शैली उपन्यासों और सैद्धांतिक आलोचना के क्रम में परिलक्षित होती है। द्विवेदी जी की विषय प्रतिपादन की शैली अध्यापकीय है। शास्त्रीय भाषा रचने के दौरान भी प्रवाह खण्डित नहीं होता।'

देवदारु निबंध में भी लेखिकीय पांडित्य का दर्शन किया जा सकता है – 'जिस आचार्य ने पतिपाटीविहित निष्टजनानुमोदित 'सज्जा' को 'छाया' नाम दिया था वह जरूर इस पेड़ की शोभा से प्रभावित हुआ था।' 'अपुष्पा फलवंतो ये'। देवदारु चूक गया, 'वनस्पति' की मर्यादा से वंचित रह गया।'

साथ ही उनकी भाषा में लोक की छौक भी देखा जा सकता है – 'अगर यह न होता तो शिव का तांडव बेमेल धमा–चौकड़ी और लस्टम–पस्टम उछल–कूद के सिवा और कुछ न होता।' वे आगे लिखते है कि – 'प्रत्येक व्यक्ति के मन में कुछ न कुछ लगता

BHDC-112_Hindi.indd 115 4/27/2022 3:29:21 PM

ही रहता है। मजेदार बात यह है कि व्यक्ति का लगना अलग–अलग होता है। 'अ–लग' अर्थात् जो न लगे। लगता है पर नहीं लगता, यह भी कोई तुक की बात हुई? तुक की बात तब होती जब लगना 'अलग' लगना न होता। इसीलिए कहता हूँ कि तुक अर्थ में होता है।'

निबंध की पठनीयता बनी रहे ऐसे में लेखक बीच – बीच में कवि, कविता या कोई ऐसा प्रसंग आ जाता है जिससे रूचि बनी रहे 'हाँ ही बौरी बिरह बस के बौरौ सबगाँव'। 'लगालगी लोचन करें, नाहक मन बँध जाय।' नाहक अर्थात् बेमतलब, निरर्थक।'

'बात यह है कि जब में कहता हूँ कि देवदारु सुंदर है तो सुनने वाले सुंदर का एक सामान्य अर्थ ही लेते हैं। हजार तरह के सुंदर पदार्थों में रहने वाला एक सामान्य सौंदर्य–धर्म। सौंदर्य का कौन–सा विशिष्ट रूप मेरे हृदय में उल्लास तरंगित कर रहा है यह बात बस, मैं ही जानता हूँ। अगर मुझमें इस बात को कहने की शक्ति नहीं हुई तो यह गूँगे का गुड़ बनी रह जाएगी।'

भाषा की दृष्टि से द्विवेदी जी के निबंध सामान्य पाठक के अभिरुचि के अनुकूल नहीं है, इनकी भाषा भी शुक्ल जी की भाषा की तरह बहुत जगह जटिल हो जाता है, लेकिन विश्वविद्यालय में पठन–पाठन के लिए आचार्य द्विवेदी की भाषा ठीक है।

5.7.2 शैली

द्विवेदी जी ने मुख्यतः चार शैलियों का प्रयोग अपने निबंध लेखन में किया है। इनकी शैली की खास बात यह है कि विषय के निष्कर्ष पर पाठक को पहुँचने के लिए अतिरिक्त ज्ञानकोष जरुरी है।

सैद्धांतिक शैली द्विवेदी जी के विचारात्मक तथा आलोचनात्मक निबंधों में अधिक मिलता है। यह शैली द्विवेदी जी की प्रतिनिधि शैली है। इस शैली की भाषा संस्कृत प्रधान और पांडित्य पूर्ण है।

कालिदास ने बताया है कि उन्होंने इस प्रयोजनातीत (निष्प्रयोजन तो कैसे कहें) समाधि के लिए देवदारु–द्रुम के नीचे वेदिका बनायी थी। शायद इसलिए कि देवदारु भी अर्थातीत छंद है – प्राणों का उल्लासनर्तन, जड़शक्ति के द्वारा आकर्षण को पराभूत करके विपुल–व्योम–मंडल में विहार करने का अर्थातीत आनंद!

कहते हैं, शिव ने जब उल्लासतिरेक में उद्दाम–नर्तन किया था तो उनके शिष्य तंडु मुनि ने उसे याद कर लिया था। उन्होंने जिस नृत्य का प्रवर्तन किया उसे 'तांडव' कहा जाता है। 'तांडव' अर्थात् 'तंडु' मुनि द्वारा प्रवर्तित 'रस भाव–विवर्जित' नृत्य! रस भी अर्थ है, भाव भी अर्थ है, परंतु तांडव ऐसा नाच है, जिसमें रस भी नहीं। भाव भी नहीं नाचनेवाले का कोई उद्देश्य नही, मतलब नहीं, 'अर्थ' नहीं। केवल जड़ता के द्वारा आकर्षण को छिन्न करके एकमात्र चौतन्य की अनुभूति का उल्लास! यह 'एकमात्र' लक्ष्य ही उसमें छंद भरता है, इसी से उसमें ताल पर नियंत्रण बना रहता है। एकाग्रीभाव छंद की आत्मा है।

वर्णनात्मक या विवरणात्मक शैली अत्यंत स्वाभाविक और रुचि पैदा करने वाला होता है। इस शैली में तद्भव तत्सम और उर्दू के प्रचलित शब्दों का भी प्रयोग हुआ है। जैसे :

''तुक वह है जो देवदारु की गगनचुंबी शिखा और समाधिस्थ महादेव की निवात–निष्कंप प्रदीप की ऊर्ध्वगामिनी ज्योति में है! अर्थात् तुक अर्थ में रहता है ध्वनि–साम्य केतुक में कुछ न कुछ अर्थचारुता होनी चाहिए। ध्वनिसाम्य साधन है, तुक अर्थ का धर्म होना चाहिए। मगर कहना खतरे से खाली नहीं है। किसी नये आलोचक ने अर्थ को लय की वकालत की है। मैं अच्छी तरह जानता हूँ कि सारी पंडित–मंडली उस गरीब पर बरस पड़ी है। अगर तुक अर्थ में मिल सकता है तो लय क्यों नहीं मिल सकता। मेरे अंतर्यामी

BHDC-112_Hindi.indd 116 4/27/2022 3:29:21 PM

कहते हैं कि तुक तो अर्थ में नहीं रहता है लय नहीं रहता। बहुत से लोग अंतर की आवाज को आँख मूँदकर मान लेते हैं। मैं नहीं मान पाता। आँखें खोलने पर भी यदि अंतर की आवाज ठीक जँचे तो मान लेना चाहिए। क्योंकि उस अवस्था में भीतर और बाहर का तुक मिल जाता है। शिवजी ने अंतर और बाहर का तुक मिलाने के लिए ही तो देवदारु को चुना था।''

आचार्य द्विवेदी जी के निबंधों में व्यंग्यात्मक शैली का बहुत ही सफल और सुंदर प्रयोग हुआ है। इस शैली में भाषा चलती हुई तथा उर्दू, फारसी आदि के शब्दों का प्रयोग भी मिलता है। उदाहरण के लिए यह गद्यांश देखिए :

''हमारे गाँव में एक पंडितजी थे। अपने को महाविद्वान् मानते थे। विद्या उनके मुँह से फचाफच निकला करती थी। शास्त्रार्थ में वे बड़े–बड़े दिग्गजों को हरा देते थे।विद्या के जोर से नहीं, फचफचाहट के आघात से। प्रतिपक्षी मुँह पोछता हुआ भागता था। अगर कुछ कैड़े का हुआ तो दैहिक–बल से जय–पराजय का निश्चय होता था। मेरे सामनेही एक बार खासी गुत्थमगुत्थी हो गई। गाँव–जवार के लोगों को पंडितजी की विद्या पर भरोसा नहीं था पर उनकी फचाफच वाणी और – भीमकाया पर विश्वास अवश्य था।शास्त्रार्थ में पंडितजी कभी हारे नहीं। कम लोग जानते हैं कि शास्त्रार्थ में कोई हारता नहीं, हराया जाता है! पंडितजी के यजमान जम के उनके पीछे लाठी लेकर खड़े हो जाते थे तो उनकी विजय निश्चित हो जाती थी।''

द्विवेदी जी ने विषय को विस्तारपूर्वक समझाने के लिए व्यास शैली को अपनाया है। व्यास शैली के माध्यम से विषय का प्रतिपादन व्याख्यात्मक ढंग से किया जाता है और अंत में उसका सार दे दिया जाता है जैसे – 'बात यह है कि जब मैं कहता हूँ कि देवदारु सुंदर है तो सुननेवाले सुंदर का एक सामान्य अर्थ ही लेते हैं। हजार तरह के सुंदर पदार्थों में रहने वाला एक सामान्यसौंदर्य–धर्म। सौंदर्य का कौन–सा विशिष्ट रूप मेरे हृदय में उल्लास तरंगित कर रहा है यह बात बस, मैं ही जानता हूँ। अगर मुझमें इस बात को कहने की शक्ति नहीं हुई तो यह गूँगे का गुड़ बनी रह जाएगी। जिसमें शक्ति होती है, वह कवि कहलाता है।'

5.8 मूल्यांकन

इस इकाई के अंतर्गत हम निबंध का प्रतिपाद्य और शीर्षक की सार्थकता पर विचार करेंगे।

5.8.1 निबंध का प्रतिपाद्य

यह निबंध एक ऐसे विषय और परिवेश पर आधारित है, जो स्थान की दृष्टि से पर्वतीय इलाका है। लेखक देवदारु के पेड़ में जीवन की विविधताएँ देखता है। वह पेड़ एक पेड़ न होकर पूरा समाज है।

इस निबंध में देवदारु अपने सौदर्य बोध के कारण देवता तथा मनुष्य के आकर्षण का कारण रहा है। यह उसकी सुन्दरता और विशालता ही है कि शिव अपनी साधना, कालिदास अपनी रचना विधान और अन्य कवियों की कविताएँ देवदारु से प्रभावित हैं। लेखक पेड़ की एक–एक विशेषताओं के साथ उसके इस धरती पर होने की महिमा का भी उल्लेख किया है। लेखक ने शिव तांडव से लेकर तुक, लय छंद, अर्थ के साथ देवदारु के होने या लगने और उसके लोकपक्षीय स्वरूप का भी उल्लेख किया है। एक तरफ देवदारु का सौदर्य और दूसरी तरफ पहाड़ों की चोटियों पर बने रहने का जीवन संघर्ष अर्थात मनुष्य जीवन की तरह ही देवदारु दिनरात संघर्ष करता हुआ नजर आता है, इसलिए देवदारु लेखक के लिए अर्थवान भी है और सामाजिक भी।

BHDC-112_Hindi.indd 117 4/27/2022 3:29:21 PM

लेखक ने अनेक मिथकीय संदर्भो के साथ देवदारु को लोकविश्वास और अन्धविश्वास से भी जोड़कर देखा है, पंडित की छड़ी से भूत भगाने का प्रसंग या भूत को माफ़ी माँगने पर मजबूर कर देने वाले प्रसंग। अंत में लेखक मनुष्य जीवन की प्राथमिकता और देवदारु के लोकव्यवहार को सर्वोपरि मानते हुए उससे सीखने और उसके निर्मम संघर्ष को जीवन में उतारने की बात करता है।

5.8.2 शीर्षक

शीर्षक की सार्थकता या उचित शीर्षक के सन्दर्भ में इतना ही कहा जा सकता है कि इस निबंध का शीर्षक देवदारु और मनुष्य जीवन या देवदारु की सामाजिक भूमिका रख सकते हैं लेकिन देवदारु शब्द के बिना इस निबंध का शीर्षक देना मुश्किल है। अतः देवदारु शीर्षक इस निबंध का उचित शीर्षक है।

5.9 सारांश

इस इकाई लेखन को पढने के बाद आप कुछ महत्वपूर्ण निष्कर्ष निकाल सकते हैं।

- देवदारु निबंध के मूल पाठ का वाचन कर सकते हैं।
- निबंध का सारांश आसानी से समझा जा सकता है।
- लेखकीय अभिव्यक्ति के साथ उनका सामान्य जीवन.परिचय व लेखन कला को समझा जा सकता है।
- देवदारु निबंध की संरचना शिल्प, अंतर्वस्तु व उसका मूल्यांकन किया जा सकता है।
- सन्दर्भ सहित व्याख्या से निबंध के कुछ महत्वपूर्ण अंशों का आप अपने से व्याख्या कर सकते हैं, यह परीक्षा की दृष्टि से भी महत्वपूर्ण होता है।
- लेखकीय अभिव्यक्ति को बारीकी से समझा जा सकता है।
- संरचना शिल्प के अंतर्गत भाषा दृशैली का अध्ययन किया गया है।
- अंतर्वस्तु के अंतर्गत रचना और लेखक के भाव और विचार का अध्ययन किया गया है।
- देवदारु को जीवन से जोड़कर भी समझा जा सकता है।
- कुछ प्रश्न स्वयं भी तैयार किए जा सकते हैं इत्यादि।

5.10 बोध प्रश्नों/अभ्यासों के उत्तर

1.	ख	2.	घ	3.	क	4.	ग
5.	ख	6.	क	7.	ग	8.	क
9.	ख	10.	क	11.	क	12.	ग
13.	क	14.	क	15.	ख		

BHDC-112_Hindi.indd 118 4/27/2022 3:29:21 PM